IJAER/September-October 2024/Volume-13/Issue-5 ISSN: 2278-9677
International Journal of Arts & Education Researc
(Peer-Reviewed, Open Access, Fully Refereed International Journal) Impact Factor:7.06

वामनावतरणम् महाकाव्य मे रस सन्निवेश

डॉ. सुमन जैन

वामनावतरणम् महाकाव्य रसों के मंजुल समन्वय से रचित एक सुमधुर रचना है, जिसका पारायण सहृदयों को आनन्दित कर जाता है। वामनावतरणम् महाकाव्य में अंगीरस के रूप में शान्तरस है। शान्ताकार श्रीमन् नारायण इस महाकाव्य के नायक हैं, जिनका ध्यान ही समस्त चित्तवृत्तियों को शांत कर देता है। वही साक्षात अवतरित होकर वामन वटु के रूप में बलि का गर्व भंजन करते हैं। उनका यह कार्य पूर्णतः लोककल्याण एवं देवसंस्कृति की पुर्नस्थापना के लिए ही है।

मनोहरी वामन वटु के मुखमण्डल के तेजोमय आभामण्डल को देखकर दानवराज बलि सर्वस्व न्यौछावर करने को लालायित हो जाता है, एवं उनकी समस्त चित्तवृत्तियाँ शमित हो जाती हैं। इसी कारण महाकाव्य में शान्तरस ही प्रधानता से आस्वादित होता है। अङ्गरस के रूप में वीर रस का उसमें भी दानवीर रस का विलास अवलोकनीय है। अद्भुत, रौद्र, भयानक एवं श्रृंगार रसों का अङ्गरस के रूप में सन्निवेश शोभन बन पड़ा है। महाकाव्य में विलसित रसों का क्रमशः विवेचन प्रस्तुत है–

1. **शान्त रस –** इस असार संसार में केवल परमात्मा ही सारवान है, ऐसा ज्ञान अथवा स्वयं परमात्मा शान्तरस का आलम्बन विभाव है, पुण्यक्षेत्र, श्रीहरि लीला क्षेत्र, तीर्थ, रमणीक वन एवं महापुरुषों का ज्ञानमय वातावरण उद्दीपन विभाव है। रोमाञ्च, दया, अनुभाव तथा हर्ष, स्मरण, मति, प्राणियों पर दया, औत्सुक्यादि व्यभिचारी भाव हैं। ये सब मिलकर सहृदयों के हृदयों में शान्त स्वरूप में परिणित हो जाता है।[1]

शान्तरस का स्थायी भाव 'शम' है तथा उत्तम प्रकृति का नायक जो कुन्द पुष्प एवं चन्द्र के समान सुन्दर कान्तिमय है, ऐसे श्री सहित नारायण शान्तरस के देवता हैं।[2]

[1] सा.द. – 3/246, 247, 248
[2] सा.द. – 3/245

आचर्य विश्वनाथ ने शान्तरस का निरूपण करते हुए कहा है – **'न यत्र दुःखं न सुखं न चिन्ता न द्वेष रागौ न च काचिदिच्छा'।।**[1]

'वामनावतरणम्' महाकाव्य का नायक 'वामन' स्वयं तो निस्पृह, सत्त्व, रज, तम गुणों से रहित शान्त है। उनके सम्मुख आने वाले प्राणी भी शान्त हो जाते हैं। पञ्चम सर्ग में ऋषि कश्यप की सत्प्रेरणा से देवी अदिति शान्तचित्त परमात्म स्वरूप ध्यान करती है तो शान्तरस की ऐसी सुन्दर अभिव्यञ्जना हुई है। यथा द्रष्टव्य –

तथाऽदितिः सर्वमुपेक्ष्य भावं, सांसारिकं विष्णुपदावसक्ता।
विष्णवन्तरा विष्णुमतिर्षभूव विष्णुक्रिया विष्णुमयी निकामम्।।
नयनजलपरीतां प्रीतिमोदश्लथाङ्गीं पुलकभरविपन्नां रुद्धकण्ठीं सवित्रीम्।
सपदि सदयमूचे पद्मनाभोऽतितृप्तः सजलजलदधीर ध्वान धुर्यस्सहेलम्।।[2]

विष्णु चरणकमलों में लीन अदिति समस्त सांसारिक भावों को उपेक्षित कर विष्णुमय हृदयवाली, विष्णुमय बुद्धिवाली, विष्णुमय क्रियाओं वाली एकदम विष्णुमयी ही हो गई। अखिलात्मा विष्णु तपस्सिद्धियों के वश होकर देवी अदिति के समक्ष प्रगट हो गये। उस विलक्षण क्षण में नेत्राश्रुओं से भीगी, प्रेम एवं आह्लाद से शिथिल अङ्गों वाली, रोमाञ्चित, अवरुद्ध कण्ठ वाली देवी अदिति से अतिशय सन्तृप्त पद्मनाभ सजलजलधर–सरीखी धीरगम्भीर वाणी में लीलापूर्वक सदयभाव से बोले।

यहाँ समस्त सांसारिक भावों की उपेक्षा तथा श्रीविष्णु आलम्बन विभाव है, पुण्यक्षेत्र, महर्षि कश्यप की सत्प्रेरणा उद्दीपन विभाव है तथा प्रेम, आह्लाद, सन्तृप्ति, स्मरण, दया व्यभिचारी भावों से निष्पन्न शम स्थायी भाव रसरूपता को प्राप्त हो रहा है।

वामन रूप में उपस्थित स्वयं श्रीहरि का साक्षात् दर्शन कर बलि का मन अनायास ही महाप्रमोद के उछाह को प्राप्त हो गया, उनकी सम्पूर्ण चित्तवृत्तियाँ सहसा ही शान्त हो गई। यथा अष्टम सर्ग में शान्तरस का शोभन सन्निवेश द्रष्टव्य है –

यथा मृगाङ्क प्रविलोक्य पार्वणं, प्रवल्गते नीरनिधिश्चलज्जलः।
भवन्तमालोक्य तथैव मे मनो, महाप्रमोदोत्सवमेति बन्धुरम्।।
कुतो न्विदं हर्षममत्ववैभवं, परोक्षरूपं मनसोऽप्यगोचरम्?

---

[1] सा.द. – 3/249
[2] वा.व. – 5/43,45

कुतश्च ते पादसरोजमाधुरी–ग्रहाभिलाषो मम देव ! वेद्मि नो।।[1]

जैसे पार्वण मृगाङ्क के दर्शन से चंचल जलराशि वाला सागर उफनने लगता है, वैसा ही आपको देखकर, मेरा मन महाप्रमोद उत्सव को प्राप्त हो रहा है। हर्ष एवं ममत्व का वैभव कहाँ से फूट पड़ा है जो कि रहस्यमय रूप वाला तथा मन के लिये भी अगोचर है? आपके चरणकमल की माधुरी को ग्रहण करने की मेरी यह अभिलाषा क्यों उत्पन्न हो गई है? हे देव ! मैं समझ नहीं पा रहा।

यहाँ वामनस्वरूपधारी परमेश्वर आलम्बन विभाव, भृगुकच्छ की पावन तपस्थली उद्दीपन विभाव, वामन वटु का दर्शन, चरणकमल का ग्रहण, सात्विक रोमाञ्च अनुभाव तथा प्रमोद, हर्ष, ममत्व, उत्सुकता जैसे व्यभिचारी भावों से निष्पन्न शान्तरस सहृदयों को आह्लादित कर रहा है।

नवम् सर्ग में वामन का राजा बलि से संवाद[2], दशम् सर्ग में गुरु शुक्राचार्य द्वारा बलि को वामन वटु के यथार्थ स्वरूप का ज्ञान करवा देने के पश्चात् बलि का सर्वाङ्ग परमेश्वर को सामने पाकर रोमाञ्चित हो उठा। वह अहोभाव से भर गया। बलि के मनोभाव के द्वारा कवि ने अत्यन्त सुन्दरता से शान्तरस का अभिव्यंजन किया है।[3] एकादश सर्ग में शान्तरस की छटा सहज ही मन को आकर्षित करती है। यथा द्रष्टव्य –

न वेद किञ्चिद् बलिरन्यदेव, हरीतरज ज्ञानविवर्तशून्यः।
निमील्य नेत्रद्वयमन्तस्थं स पद्मनाभं निपपौ प्रकामम्।।[4]

चतुर्दश सर्ग में शान्तरस की अभिव्यंजना अत्यनत शोभन है –

एवं नम्रै संस्तवैरिष्टदेवं,
पश्यन् स्वान्ते राजमानं नृसिंहम्।
स्तुत्वा सम्यग् जातरोमाञ्चसौख्यः,
प्रह्लादोऽभूदङ्घ्रियुग्मप्रलीनः।।[5]

---

[1] वा.व. – 8/45,46
[2] वा.व. – 9/33,34
[3] वा.व. – 10/41,44
[4] वा.व. – 11/47
[5] वा.व. – 14/44

अपने अन्तःकरण में विराजमान नृसिंह को देखते हुए विनम्र संस्तुतियों द्वारा इष्टदेव की सम्यक् रूप से स्तुति करके रोमाञ्च सुख से ओतप्रोत प्रह्लाद श्री हरि के चरणयुगल में समर्पित हो गया।

यहां श्री हरि आलम्बन विभाव, श्री हरि का साक्षात्कार उद्दीपन, संस्तुतियां, चरणयुगल में समर्पण अनुभाव तथा रोमाञ्च हर्ष, व्यभिचारी भावों से अभिव्यञ्जित होकर शान्तरस आस्वादित हो रहा है।

बलि परमात्मस्वरूप वामन के चरणों में सर्वस्व अर्पित कर, निर्मल, शान्त बन गये हैं।[1] इसी प्रकार षोड्श सर्ग में भार्गव शुक्राचार्य के वामन के चरणों में सर्वात्मना समर्पण में शान्तरस का समधिक शोभन समावेश किया गया है।

यथा द्रष्टव्य –

कृतविशदसपर्यो वाचिकैः स्वैरुदारै–
र्हरिचरणनिलीनो भार्गवोऽभून्निकामम्।
करकमलवितीर्णैः स्पर्श सौख्यैश्च विष्णो–
र्निखिलहृदयतापस्तस्य तूर्णशशाम।।[2]

यहाँ वामन का परमात्मस्वरूप आलम्बन विभाव, श्रीहरि की लीला एवं पुण्यक्षेत्र उद्दीपन विभाव, उदार वचन, संस्तवन, कर कमलों का संस्पर्श अनुभाव, तन्मयता, सुख, हृदय सन्ताप का शान्त हो जाने जैसे भावों से पोषित शम स्थायी भाव रस रूपता को प्राप्त हो रहा है।

स्वयं अभिराज राजेन्द्र मिश्र ने अपने महाकाव्य में अङ्गीरस शान्त को स्वीकार किया है। यथा द्रष्टव्य –

शान्तोङ्गी रस आसुरीं प्रशमयन् वार्तामृत ध्वंसिनीम्।।[3]

ऋत को विध्वंस्त करने वाली आसुरी वृत्ति को पूर्णतः प्रशमित करता हुआ शान्तरस ही इस महाकाव्य का अङ्गीरस है।

---

[1] वा.व. – 15/62,63
[2] वा.व. – 16/38
[3] वा.व. – 17/66

2. **वीररस** – वामनावतरणम् महाकाव्य में अङ्ग रस के रूप में वीररस समधिक आस्वादनीय है। दैत्यराज बलि के अमरावती विजयाभिमान के चित्रण से हठात् सहृदयों का चित्त वीररस से आप्यायित हो जाता है।[1]

महाकाव्य में दानवीर प्रकार[2] का समावेश चित्त को रसाप्लावित कर देने में पूर्ण सक्षम रहा है। वामन वटु के रूप में स्वयं परमेश्वर याचक के रूप में उपस्थित है तो अपनी चित्तवृत्ति को नारायण में समाहित कर, अपनी काया का ही दान कर दिया। यथा द्रष्टव्य –

एवं निगद्यवचनं वचनीयमुक्तं,
श्रद्धा विमन्थर तनुर्बलिरात्मनिष्ठः।
विष्णौ समर्पित निजाखिलचित्तवृत्ति–
स्तस्थौ पदाम्बुजयुगे प्रणिधाय कायम्।।[3]

सर्वस्वहरण करवा कर विष्णु प्रीति का भाजन बनने वाला बलि संसार के सम्मुख श्रेष्ठ दाताओं की श्रेणी में आ गया।

3. **अद्भुत रस** – महाकाव्य में श्रीहरि का वामन के रूप में अवतरण, अदिति के आङ्गण में सामान्य बालक की भांति क्रीड़ाएं करना और बलि के यज्ञमण्डप में वामन का विराट स्वरूप सभी को आश्चर्य में डाल रहा है।

यहां अद्भुत रस का समावेश चमत्कार का सृजन कर रहा है। यथा –

अथ त्रिपद मेदिनी महित्कलमहत्तरं दानकृत्येऽखिले,
प्रयाति चरितार्थतां लघुवपुर्महावामनम्।
अवर्धत शनैः शनेर्जनितकौतुकं पश्यतां,
महतिकलमहत्तरं ननु महत्तमं व्योमगम्।।[4]

यहाँ अलौकिक वामन आलम्बन विभाव, विराट स्वरूप का दृश्य उद्दीपक विभाव, वेपथु, नेत्र विकास अनुभाव तथा कौतुक, स्तम्भन व्यभिचारी भावों से अद्भुत रस की अभिव्यञ्जना हो रही है।

---

[1] वा.व. – 2/48, 3/2,4

[2] परपराक्रम–दानादिस्मृतिजन्मा औन्नत्याख्य उत्साहः।
वीरश्चचतुर्धा, दान–दया–युद्ध–धर्मैस्तदुपाधे रुत्साहस्य चतुर्विधत्वात्।। रस गंगाधर/प्रथम आनन

[3] वा.व. – 12/38

[4] वा.व. – 12/1

4. **रौद्र रस** – महाकाव्य में रौद्र रस का अवसर ग्यारहवें सर्ग में उपस्थित होता है, जब दैत्य गुरु शुक्राचार्य द्वारा बार–बार समझाए जाने पर भी बलि दान के संकल्प पर दृढ़ रहते हैं तब शुक्राचार्य क्रोधित होकर राजा बलि को शाप दे देते हैं।[1]
5. **भयानक रस** – महाकाव्य में भयानक रस का सन्निवेश अङ्ग रस के रूप में हुआ है। द्वितीय सर्ग में बलि के पराक्रम के समक्ष देवराज, देव, देवाङ्नाएँ भयभीत है जो भयानक रस के उद्रेक में सहायक बना है।[2]
6. **शृंगार रस** – महाकाव्य में शृंगार रस का अत्यल्प वर्णन प्राप्त होता है। शान्तरस प्रधान इस महाकाव्य में शृंगार रस के विलास के लिए अवसर ही प्राप्त नहीं हुआ है। केवल षष्ठ सर्ग में जब देवी अदिति श्रेष्ठ सन्तान की प्राप्ति की कामना से पति कश्यप की सेवा में उपस्थित होती है तभी शृंगार रस का ललित संयोजन किया गया है।[3]

निष्कर्ष –

वामनावतरणम् महाकाव्य शान्तरस प्रधान सुमधुर रचना है। महाकाव्य का नायक लोकोत्तर परम पुरुष श्रीहरि है, जिनका साक्षात् दर्शन अनायास ही चित्तवृत्तियों को शान्त कर देने में समर्थ है अतएव सम्पूर्ण महाकाव्य में शान्तरस का शोभातिशायी पल्लवन हुआ है।

महाकाव्य में अङ्गरस के रूप में वीररस की भव्यता अनुभवगम्य है। पराक्रमी बलि के विजयाभिमान में वीररस का सन्निवेश है। महाकाव्य में दानवीर रस का समावेश सहृदयों को भाव विह्वल बना देने वाला है।

महाकाव्य में अद्भुत रस का समावेश शान्तरस के उद्रेक में सहायक बना है। श्रीनारायण का विराट् स्वरूप, बलि का सर्वस्व दान, भक्त की प्रीतिवश श्री हरि का द्वारपाल बन जाना, उनकी अनुपमेय अनुकम्पा में अद्भुत रस का हृदयहारी समावेश सहृदयों को चमत्कृत कर देने में सफल रहा है।

---

[1] वा.व. – 11/23–25
[2] वा.व. – 2/27,28
[3] वा.व. – 6/3,4

शुभाकांक्षी गुरु के द्वारा प्रबोधित किये जाने पर भी बलि के द्वारा अवज्ञा करने पर क्रोधित गुरु के द्वारा बलि को शापित करने के अवसर पर रौद्ररस का सन्निवेश औचित्यपूर्ण कहा जा सकता है।

महाकाव्य में हास्य, वीभत्स, करुण रसों के पल्लवन का अवसर ही प्राप्त नहीं हुआ है। बलि के अभ्युदर एवं देवगण की दीन–हीन अवस्था पर देवी अदिति दुःखी है, यह स्थिति करुणाजनक तो है, परन्तु करुण रस से सहृदयों के चित्त को आप्यायित करने में समर्थ नहीं है। महाकाव्य में शृंगार रस का सहृदयों को किञ्चद् आस्वादन प्राप्त होता है।

निस्संदेह वामनावतरणम् महाकाव्य शान्तरस से चित्त को पूर्णतः आप्लावित कर देने वाली एक मनोरम रचना है, जिसमें सहृदयों के अशान्त मन शान्त हो सकते हैं। रस पल्लवन की दृष्टि से यह महाकाव्य सपफल कहा जा सकता है।